अपने स्वरूप को जानकर उसके अनुसार कर्म करे। जीवात्मा का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। वह भगवान् की तटस्था शक्ति है। मायामोहित होने पर वह बँध जाता है; दूसरी ओर, कृष्णभावनाभावित हो जाने पर, अर्थात् अपनी परा-प्रकृति ज्ञान से युक्त होने पर अपने यथार्थ और स्वाभाविक जीवन को फिर प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार का पूर्ण ज्ञानी जीव प्राकृत इन्द्रियतृप्ति के भाव को सम्पूर्ण रूप से त्याग देता है, अर्थात् इन्द्रियतृप्ति की क्रियाओं का पूर्ण रूप से संन्यास कर देता है। इसका अभ्यास विषयासक्ति से इन्द्रियों का संयम करने वाले योगी करते हैं। पर कृष्णभावनाभावित पुरुष को तो किसी ऐसे कार्य में इन्द्रियों को प्रवृत्त करने का अवसर ही नहीं मिलता, जिसका सीधा सम्बन्ध श्रीकृष्ण से न हो। इसलिए वह संन्यासी होने के साथ-साथ योगी भी है। ज्ञान और इन्द्रियनिग्रह—योग के ये दोनों प्रयोजन कृष्णभावना में अपने आप पूर्ण हो जाते हैं। जो स्वार्थप्रेरित क्रियाओं को त्याग नहीं सकता, उस मनुष्य के लिए ज्ञान अथवा योग व्यर्थ है। जीवात्मा का यथार्थ लक्ष्य स्वार्थतृप्ति को पूर्णरूप में त्याग कर भगवत्प्रीति के कार्य में लग जाना है। कृष्णभाव-नाभावित पुरुष में स्वार्थ की लेशमात्र अभिलाषा शेष नहीं रहती। वह तो नित्य भगवत्-प्रीति के कार्य में ही निमग्न रहता है। इस सिद्धान्त के अनुसार जिसे भगवान् का ज्ञान नहीं है, वह मनुष्य अवश्य स्वार्थतृप्ति में लगा हुआ है, क्योंकि कुछ न कुछ कर्म किए बिना कोई नहीं रह सकता। कृष्णभावनामृत के अभ्यास से इन सब प्रयोजनों की पूर्ण सिद्धि हो जाती है।

27/4

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते।।३।।

आरुरुक्षोः =योग का प्रारम्भ करने वाले; **मुनेः** =मुनि का; **योगम्** =अष्टांगयोग; **कर्म** =कर्म; **कारणम्** =कारण; **उच्यते** =कहा जाता है; **योग** =अष्टांगयोग में; **आरूढस्य** = आरुढ़ हुए; **तस्य** =उसका; **एव** =निःसन्देह; **शमः** =सम्पूर्ण प्राकृत-क्रियाओं का त्याग; **कारणम्** =हेतु; **उच्यते** =कहा जाता है।

अनुवाद

अष्टांगयोग के प्रारम्भिक साधक के लिए कर्म साधन कहा जाता है और योगारूढ़ साधक के लिए प्राकृत क्रियाओं को सम्पूर्ण रूप से त्याग देना हेतु कहा जाता है।।३।।

तात्पर्य

श्रीभगवान् से युक्त होने की पद्धति का नाम **योग** है। यह उस निःश्रेणी (सीढ़ी) के समान है, जिससे परमोच्च तत्त्व की अनुभूति होती है। जीव की सबसे अधम अवस्था से प्रारम्भ होकर यह निःश्रेणी शुद्ध परमार्थ में पूर्ण स्वरूप-साक्षात्कार तक जाती है। विविध स्तरों के अनुसार इसके सोपानों के भिन्न-भिन्न नाम हैं। इस सम्पूर्ण योग-सीढ़ी के तीन भाग हैं—ज्ञानयोग, ध्यानयोग तथा भक्तियोग। सीढ़ी